International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 29-09-2022; Accepted: 14-10-2022; Published: 01-11-2022
Volume 8, Issue 6, 2022, Page No. 16-19

कांवड़ यात्रा का उद्भव एवं ऐतिहासिकताः ब्रज क्षेत्र के सन्दर्भ में

Sumit Yadav
PhD Scholar, Department Of CSCRC, Jamia Millia Islamia, New Delhi, India

सारांश
जब प्रथाएं काफी लम्बे समय तक सक्रिय रहती है और अपनी निरन्तरता के कारण पूर्ण रूप से जड़ जमा लेती है तो उनका जिक्र समाज की परम्पराओं के रूप में होने लगता है और इस सन्दर्भ में कांवड़ परम्परा को भी देखा जा सकता है जो अपने साथ कई मिथक और किवदन्तियां लिए हुए गतिशील है। तीर्थयात्रा एक वैश्विक घटना है जो लगभग सार्वभौमिक रूप से विभिन्न संस्कृतियों में पाई जाती है। बड़ी संख्या में तीर्थ स्थान राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा वाले प्रमुख धार्मिक संस्थानों से लेकर क्षेत्रीय तीर्थस्थलों और प्रमुख तीर्थों की स्थानीय प्रतियों तक ऐतिहासिक और आधुनिक समय में विकसित हुए हैं। पवित्र स्थानों की तरफ तीर्थयात्रा हर धर्म में एक प्राचीन और सतत धार्मिक परंपरा है। प्रस्तुत लेख कांवड़ यात्रा के स्वरुप, उद्भव एवं उसके ऐतिहासिक पहलुओं के बारे में चर्चा करता हैद्य साथ ही ब्रज क्षेत्र के प्रसिद्ध शिव मंदिर बटेश्वर नाथ धाम के संदर्भ में कांवड़ यात्रा के बढ़ते प्रभाव को भी दर्शाता है।

मूल शब्दः तीर्थयात्रा, कांवड़, शिवरात्रि मेला, गंगाजल, श्रावण, इतिहास, मिथक

प्रस्तावना
तीर्थयात्रा दुनिया के अधिकांश हिस्सों में देखा जाने वाला एक प्राचीन संस्कार है। श्रावण (जुलाई–अगस्त) के मानसून महीने और माघ (फरवरी) माह में शिवरात्रि के दौरान उत्तर भारत के गंगा के मैदानी इलाकों में आज यात्रा करते हुए भगवा या नारंगी रंग के वस्त्रों में पुरुषों और महिलाओं के समूहों को देखा जा सकता है। इन समूहों को कांवड़िया कहा जाता है और इनके द्वारा की जाने वाली यात्रा को कांवड़ यात्रा कहा जाता है। इस यात्रा में कांवड़ यात्रियों द्वारा गंगा नदी से गंगाजल लेकर स्थानीय शिव मंदिर पर यह गंगाजल चढ़ाना होता है। कांवड़ तीर्थयात्रा आज भारत के मुख्य वार्षिक धार्मिक आयोजनों में से एक है। यह यात्रा झारखंड के देवघर, हरिद्वार, पश्चिम बंगाल, ब्रज आदि क्षेत्रों में काफी लोकप्रिय हैद्य अगर हरिद्वार के संदर्भ में देखें तो 2010 और 2011 में वहाँ अनुमानित बारह मिलियन प्रतिभागियों ने भाग लिया थाद्य वहीं 2022 में कांवड़ यात्रियों की यह संख्या बढ़कर लगभग अड़तीस मिलियन तक पहुँच गयी है। यह बढ़ती लोकप्रियता ब्रज क्षेत्र में भी देखने को मिलती हैद्य इस बढ़ती लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए इस लेख में कांवड़ परम्परा के उद्भव और उसके ऐतिहासिक संदर्भ के बारे में बताया गया है एवं ब्रज क्षेत्र के सोरों (जिला–कासगंज) से लेकर आगरा जिले के एक प्रमुख स्थानीय तीर्थ बटेश्वर नाथ धाम की लोकप्रिय कांवड़ यात्रा का अध्ययन किया गया है। ये कांवड़ यात्री इस दौरान लगभग 100–150 किमी या उससे अधिक की दूरी को सबसे कठिन तरीके से पैदल तय करते हैं या दौड़ते हैं या तपती धूप में खुद को दंडवत करते हैं।

श्रावण (जुलाई–अगस्त) के मानसून महीने और माघ (फरवरी) माह में शिवरात्रि के दौरान उत्तर भारत के गंगा के मैदानी इलाकों में आज यात्रा करते हुए भगवा या नारंगी रंग के वस्त्रों में पुरुषों और महिलाओं के समूहों को देखा जा सकता है। इन समूहों को कांवड़िया कहा जाता है और इनके द्वारा की जाने वाली यात्रा को कांवड़ यात्रा कहा जाता हैद्य कांवड़ तीर्थयात्रा आज भारत के मुख्य वार्षिक धार्मिक आयोजनों में से एक ह। अगर हरिद्वार के संदर्भ में देखें तो 2010 और 2011 में वहाँ अनुमानित बारह मिलियन प्रतिभागियों ने भाग लिया था। तीर्थयात्रा और सामाजिक संदर्भ के बीच के महत्वपूर्ण संबंध को इस शोध में ब्रज क्षेत्र के सोरों (जिला – कासगंज) से लेकर आगरा जिले के एक प्रमुख स्थानीय तीर्थ बटेश्वर नाथ धाम की लोकप्रिय कांवड़ तीर्थयात्रा पर ध्यान केंद्रित करके खोजा गया है। ये कांवड़ यात्री इस दौरान लगभग 100–150 किमी या उससे अधिक की दूरी को सबसे कठिन तरीके से पैदल तय करते हैं या दौड़ते हैं या तपती धूप में खुद को दंडवत करते हैं। इस लेख में ये देखने का प्रयास होगा कि कांवड़ यात्रा कब,कैसे और कहाँ से शुरू हुई ? कांवड़ यात्रा कितने प्रकार की होती है ? कांवड़ियों के देवता शिव और गंगा का इस यात्रा में क्या महत्व है और आख़िर वो क्या वजह है कि इतनी कठिन तीर्थयात्रा करने के लिए हर साल लाखों लोग घर की सुख–सुविधाओं को छोड़ देते हैं|

अपने सबसे बुनियादी रूप में कांवड़ धार्मिक प्रदर्शनों की एक शैली को संदर्भित करता है जहां कांवड़ प्रतिभागी बांस की एक लकड़ी के दोनों ओर लटकी हुईं टोकरी में एक पवित्र स्रोत से पानी ले जाते हैं। इस यात्रा का नाम कांवड़ नामक उपकरण से लिया गया है और इसके माध्यम से जल आमतौर पर शिवलिंग पर चढाने के लिए दूर के मंदिरों में ले जाया जाता है। जल का स्रोत अक्सर गंगा या गंगा से निकली हुई नदियों को माना जाता है और यह गंगाजल शिव को समर्पित है जिन्हें भोले या भोले बाबा के रूप में भी संबोधित किया जाता है। कांवड़ यात्रियों को पैदल चलते हुए, दौड़ते हुए या मोटरबाइक चलाते हुए देखा जाता है और इस दौरान उनके साथ हिंदू भगवान शिव को समर्पित लोकप्रिय गीतों को लाउडस्पीकर से बजाया जाता है। ये कांवड़ यात्री श्रावण और माघ के महीने में शिवरात्रि उत्सव के दौरान अपने गांव के शिव मंदिर को जल समर्पित करने के लिए गंगा नदी से जल लेने के लिए दूर दूर से आते हैं क्योंकि कुछ तीर्थयात्रियों का ये मानना था कि उनके गाँव में शिवलिंग बिना किसी मानवीय हस्तक्षेप के स्वयं प्रकट हुए थेद्य इस प्रकार के शिवलिंग को स्वयंभू कहा जाता है अर्थात् स्वयंभू शिव की वो छवि है जो किसी स्थान पर चमत्कारी रूप से प्रकट होती है और माना जाता है कि भारत में मौजूद बारह ज्योतिर्लिंग स्वयंभू हैं जबकि दूसरे प्रकार के शिवलिंग भी होते हैं जिन्हें मानव द्वारा स्थापित किया जाता है इसलिए उन्हें "स्वरुप" या "स्थापित" शिवलिंग कहा जाता हैद्य ब्रज क्षेत्र के संदर्भ में अधिकांश कांवड़ यात्री सोरों के निकट गंगा घाट से गंगा जल लेते हैं और अपने गाँव के शिव मंदिर पर जल अर्पित करने के बाद भी परिवार

सहित लोकप्रिय बटेश्वर नाथ धाम पर गंगा जल अर्पित करने आते हैं और इसी के साथ कांवड़ यात्री इसी स्थान पर आकर अपनी यात्रा समाप्त करते हैं|

बटेश्वर नाथ धाम

उत्तर प्रदेश के आगरा जिले से लगभग सत्तर किलोमीटर पूर्व दिशा में बाह नामक तहसील हैद्य बाह से दस किलोमीटर उत्तर में यमुना नदी के किनारे बाबा भोले नाथ का प्रसिद्ध स्थान बटेश्वर धाम है। एक मिथक के अनुसार बटेश्वर का नाम बटेश्वर इसलिए पड़ा क्योंकि यहाँ भगवान् शिव ने एक वट वृक्ष के नीचे आराम किया था इसलिए यह स्थान "वट ईश्वर" कहलाने लगा और कालान्तर में बटेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआद्य यहाँ यमुना किनारे शिव के एक सौ एक मन्दिर मौजूद हैं जिन्हें भदावर के राजा बदन सिंह के द्वारा 1646 ई. के आस पास बनवाया गया । जनश्रुति के अनुसार बटेश्वर धाम के लिये एक कथा कही जाती है कि भदावर के राजा और मैनपुरी के राजा परमार ने आपस की लड़ाई को समाप्त करने के लिए एक समझौता किया कि जिसके भी घर कन्या पैदा होगी, वह दूसरे के पुत्र से शादी करेगा और ऐसा करके दुश्मनी दोस्ती में बदल जाएगी। लेकिन दोनों राजाओं के यहाँ लड़की ही पैदा हुईं मगर राजा भदावर ने घोषणा की कि उनके पुत्र पैदा हुआ है। समझौते के अनुसार जब विवाह का समय आया तो मैनपुरी के राजा ने शादी की व्यवस्थाएं करना शुरू कर दी। जब राजा भदावर की लड़की को पता लगा कि उसके पिता ने झूठ बोलकर राजा परमार को उसकी लडकी से शादी का वचन दिया हुआ है तो वह अपने पिता के वचन को पूरा करने के लिये भगवान शिव की आराधना यहीं बटेश्वर नामक स्थान पर करने लगी। उसकी विनती न सुनी जाने के कारण उसने अपने पिता की लाज को बचाने हेतु यमुना नदी में आत्महत्या के लिये छलांग लगा दी। इसी समय वहां भगवान शिव के लिए की गई आराधना का चमत्कार हुआ और वह कन्या पुरुष रूप में इसी स्थान पर उत्पन हुइ। राजा भदावर ने उसी कारण से इस स्थान पर एक सौ एक मन्दिरों का निर्माण करवाया जो आज बटेश्वर नाम से प्रसिद्ध हैं।

बटेश्वर को छोटी काशी या ब्रज की काशी भी कहा जाता है। कांवड़ यात्रा की लोकप्रियता के साथ साथ बटेश्वर की भी लोकप्रियता बढती गयी और तीर्थयात्री इस शिव मंदिर की तरफ अधिक संख्या में आकर्षित होने लगेद्य श्रावण के महीने में इस स्थान पर हज़ारों की संख्या में कांवड़िये अपनी भिन्न भिन्न प्रकार की रंग बिरंगी कांवडों के साथ गंगा जल अर्पित करने आते हैं ।

कांवड़ की आकृति

कांवड़िया अधिकांश यात्रा लगभग नंगे पांव में करते हैं और कई विभिन्न प्रकार के अनुष्ठानों द्वारा अपनी यात्रा को बढ़ाते हैं। कांवड़ यात्रा अलग अलग रूप में देखी जाती है जैसे– खड़ी कांवड़, हथेस्वरी कांवड़, डाक कांवड़, दांडी कांवड़ आदि। श्रावण महीने में कांवड़ यात्रा के दौरान गंगा नदी के घाटों पर बड़ी संख्या में तीर्थयात्रियों द्वारा अपने कांवडों को लगन से सजाते हुए देखना एक मनोरम दृश्य है। अधिकांश मामलों में कांवड़ प्रतिभागी बाजार से बांस की लकड़ी से बने हुए आंशिक रूप से सजाए गए या साधारण ढाँचे खरीदते हैं, इसमें बांस की छड़ी से जुड़ी दो छोटी टोकरियां शामिल होती हैं, जिसके शीर्ष पर विभाजित बांस से बना एक मेहराब होता है। फिर वे इस ढांचे को को रंग बिरंगे रूमाल, रिबन, माला, प्लास्टिक के तोते, शिव– पार्वती के चित्रों और शिव के प्रतीक चिन्ह से सजाते हैं जैसे– सांप, त्रिशूल, डमरू आदिद्य इसके अलावा हालिया समय में कांवड़ की सजावट में नेताओं की तस्वीरें, तिरंगा और अन्य देशभक्ति के प्रतीक चिन्ह भी शामिल कर लिए गए है॥

कांवड़िया खास देखभाल के साथ अपने कांवड़ तैयार करते हैं। टोकरियों को आधा घास के साथ रखा जाता है जिसमें कांच या प्लास्टिक की कई छोटी बोतलों में या दो बोतलों में गंगाजल रखा जाता है। जो कांवड़िये अपने कौशल के बारे में अधिक निश्चित हैं वे विशेष कांवडों को गढ़ने के लिए बहुत अधिक प्रयास करते हैं। ऐसे कई दिग्गज तीर्थयात्रियों के समूह के संरक्षक या गुरु के रूप में नेतृत्व करते हैं। वे अक्सर अपने साथ कांवड़ का मूल ढांचा लाते हैं जो घर पर तैयार किया जाता है एवं बाकी की सजावट को तीर्थयात्रा के समय के लिए छोड़ देता हैद्य इसके अलावा अगर कांवड़ियों के रूप की बात की जाए तो कांवड़िया साधारण कपड़े या गेरू रंग की टीशर्ट पहनते हैं जिस पर शिव की तस्वीर छपी हुई होती हैद्य ये पैरों में घुँघरू बाँध कर चलते हैं ताकि रास्ते में चलते समय नींद न आये ,सांप या कीड़े मकौड़े घुँघरू की धुन सुनकर मार्ग से दूर रहें और घुँघरू बाँधने का अन्य उद्देश्य ये भी होता है कि यात्रा के दौरान दोहे या गीत गाते समय घुँघरू की धुन से लय बाँधी जा सके द्य

कांवड़ यात्रा पर चर्चा करने से पहले यह जानना जरुरी हो जाता है कि कांवड़ यात्रा की कहानी क्या है एवं इसका उद्भव कब, कहाँ और कैसे हुआ?

कांवड़ यात्रा का ऐतिहासिक सन्दर्भ

हाल ही में हरिद्वार, दिल्ली,वाराणसी एवं ब्रज जैसे क्षेत्रों में कांवड़ियों के उदय ने इस धारणा को जन्म दिया है कि कांवड़ यात्रा एक नई घटना है और ऐसा बोला जाता है कि यह संभवतः हिंदू राष्ट्रवादी राजनीति के उदय से जुड़ी हुई है। हालांकि लॉकटेफेल्ड की प्रारंभिक जांच में यह सुझाव दिया गया था कि कांवड़ यात्रा की जड़ हरिद्वार से पहले बिहार/झारखंड के एक पुराने तीर्थ में देखने को मिलती है जो हिंदू राष्ट्रवाद के उदय से बहुत पहले से मौजूद था। बिहार, झारखंड में कांवड़ तीर्थयात्रा का इतिहास काफी हद तक अलिखित पाया गया है लेकिन उपलब्ध साक्ष्य के कुछ टुकड़े महत्वपूर्ण घटनाओं और ऐतिहासिक ताकतों के सम्बन्ध के बारे में बताते हैं जिन्होंने स्थानीय सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन को आकार दिया है।

उत्तर भारत में इस तीर्थयात्रा के हालिया विस्फोट की मीडिया में व्यापक रूप से चर्चा की गई है और इस तरफ हाल ही में विद्वानों का ध्यान आकर्षित होना शुरू हुआ है। लेकिन कई लोगों के लिए अनजान कांवड़ तीर्थयात्रा का एक बड़ा, पुराना और जटिल रूप सदियों से बिहार और उत्तर–पूर्वी क्षेत्रों में चुपचाप होता रहा है। यह भारतीय राज्यों बिहार, झारखंड और नेपाल के तराई का कांवड़ तीर्थ (तीर्थयात्रा) है और इसे अपनी तरह का सबसे पुराना तीर्थ माना जाता है। कांवड़ की प्राचीनता की व्याख्या करने के लिए लॉकटेफेल्ड ने स्थानिक प्रतिस्थापन की अवधारणा का उपयोग किया है और इसका उपयोग करके उन्होंने हरिद्वार की कांवड़ यात्रा को देवघर की कांवड़ यात्रा के क्षेत्रीय प्रतिस्थापन के तौर पर देखा है|

तीर्थयात्रा से सम्बन्धित मध्यकालीन साहित्य जैसे लक्ष्मीधर की कृत्यकल्पतः, वाचस्पति द्वारा रचित तीर्थचिंतामणि, नारायण भट्ट द्वारा रचित त्रिस्थलीसेतु आदि पर गौर किया जाए तो यह स्पष्ट है कि इन साहित्यों में कांवड़ यात्रा के बारे कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता हैद्य बिहार की कांवड़ यात्रा पहली बार 1770 के ब्रिटिश लेखन में सामने आई थी और संभवतः चौदहवीं–सोलहवीं शताब्दी की शुरुआत में भी मौजूद थी। हालांकि इसे बिहार और आस–पास के क्षेत्रों के बाहर बहुत कम जाना जाता था लेकिन वर्तमान समय में लाखों लोग पवित्र शहर हरिद्वार, देवघर, सुल्तानगंज और ब्रज क्षेत्र के सन्दर्भ में बात की जाय तो सोरों (जिला–कासगंज) से बटेस्वर धाम (जिला–आगरा) की ओर जाते हैं या लौटते हैं और इनके द्वारा कंधे पर लटकाए गए बांस के खंभे (कांवड़) के सिरों से लटके हुए दो टोकरियों या बर्तनों में गंगा जल ले जाया जाता है। यह घटना निश्चित रूप से सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी की शुरुआत में मौजूद थी जब जेसुइट

और अंग्रेजी यात्री ने उत्तर भारत में अपनी यात्रा के दौरान कई जगह पर कांवड़ तीर्थयात्रियों को देखा और उनके बारे में वर्णन किया था । तीर्थयात्रा की ऐतिहासिक कथा अनिवार्य रूप से विभिन्न स्रोतों से खींची गई कहानियों के साथ बुनी गई या एकत्रित की हुई एक पोथी है। इसके अलावा कांवड़ तीर्थयात्रा का एक व्यापक इतिहास उन सभी घटनाओं को जोडकर बनाया जाना चाहिए जो बहुत अलग स्थानों और समय में हुई थी द्य जैसे कि वैद्यनाथ मंदिर के इतिहास, सुल्तानगंज के इतिहास, हरिद्वार का इतिहास या बटेश्वर का इतिहास आदि |

कांवड़ियों का सबसे पहला विवरण हॉजेस द्वारा 1780 के दशक में बनाई गई एक पेंटिंग है जिसमें वैद्यनाथ मंदिर के बाहर खड़े कांवड़ को कंधे पर लटकाए हुए दो आकृतियों को दर्शाया गया है। तीर्थयात्री पेड़ों से घिरे छह मंदिरों के समूह के सामने खड़े दिखाई दे रहे हैं। हॉजेस को ईस्ट इंडिया कंपनी ने कंपनी के क्षेत्रों में जीवन के बारे में जो कुछ भी देखा, उसे चित्रित करने के लिए नियुक्त किया था। होजेस ने मौके पर चित्रकारी की और ध्यान से वास्तविक जीवन के चित्रों की रिकॉर्डिंग भी की । पाठ में उन्होंने सुल्तानगंज से गंगा जल को भारत के विभिन्न हिस्सों में ले जाने की परंपरा का उल्लेख किया है लेकिन मुख्य रूप से वैद्यनाथ तक। ब्रिटिश अभिलेखों का इतिहास स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अठारहवीं शताब्दी के अंत तक कांवड़ यात्रा पहले से ही अच्छी तरह से स्थापित हो चुकी थी और भारत के हिंदू तीर्थयात्रा रिकॉर्ड (2017) से प्राप्त जानकारी से पता चलता है कि तीर्थ रिकॉर्ड 1700 ई. तक देवघर में रखे जा रहे थे। अतः देवघर के वैद्यनाथ धाम से शुरू होने वाली कांवड़ यात्रा का धीरे धीरे कालान्तर में भारत के अन्य क्षेत्रों में विस्तार होने लगा विशेषकर उत्तराखंड,उत्तर प्रदेश,पुरी,महाराष्ट्र,पश्चिम बंगाल आदि मेंद्य अगर पश्चिमी उत्तर प्रदेश के सन्दर्भ में इस यात्रा की बात की जाय तो उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के पुरा महादेव में एक प्रसिद्ध शिव मंदिर एक प्रमुख स्थल रहा है। ऐतिहासिक रूप से उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध के औपनिवेशिक रिकॉर्ड 'पुरा' में दो वार्षिक धार्मिक मेलों की रिपोर्ट करते हैं, जिनमें से प्रत्येक में कई हजार मेले शामिल हैं। इनमें से एक फरवरी में, शिवरात्रि के अवसर पर और दूसरा जुलाई/अगस्त में श्रावण के चंद्र महीने के दौरान था। करीब तीन दशक पहले तक यह संख्या हजारों में रही। त्योहार के औपनिवेशिक स्रोतों से परे, 1970 के दशक तक आधिकारिक रिकॉर्ड में कांवड़ का अधिक उल्लेख नहीं हैद्य ब्रज क्षेत्र के कई 70–80 वर्ष के उम्रदराज़ व्यक्तियों से साक्षात्कार के दौरान पता चला कि कुछ गिने–चुने लोगों ने ही उस समय विशिष्ट व्रतों का पालन करते हुए कांवड़ यात्रा की थीद्य 1980 के दशक के अंत या 1990 के दशक की शुरुआत में श्रावण माह में हरिद्वार तीर्थयात्रा का विस्तार होना शुरू हो गया था। 1990 में हरिद्वार में अपने फील्डवर्क के दौरान जेम्स लोकेटफील्ड ने एक चौथाई मिलियन तीर्थयात्रियों का अनुमान लगाया, यह संख्या 1996 में उनकी दूसरी यात्रा से तीन गुना हो गई थी। रिपोर्ट्स के अनुसार 2002 में कांवड़ यात्रियों की संख्या चार मिलियन थी, जो 2004 में बढ़कर छह मिलियन, 2009 में सात मिलियन और 2010 और 2011 में बारह मिलियन से अधिक थी द्यवहीं 2017 में इनकी संख्या बढ़कर 30 मिलियन, 2018 में 35 मिलियन, 2019 में 36 मिलियन पायी गयीद्य कोरोना महामारी के दौरान दो साल तक यह यात्रा बंद रही और उसके बाद हालिया रिपोर्ट्स में ये बताया गया कि 2022 में इस यात्रा में भाग लेने वाले तीर्थयात्रियों की संख्या बढकर 38 मिलियन तक पहुँच चुकी है|

इस जल ढोने वाली यात्रा का एक अन्य क्षेत्रीय उदाहरण चौत्र माह में होने वाली महाराष्ट्र के शिंगनापुर की कांवड़ तीर्थयात्रा है, जो कैलाश के रूप में वर्णित एक पहाड़ी है, जहां शिव और पार्वती निवास करते हैं। हर साल वहां पूरे क्षेत्र के गांवों से लाखों लोग आते हैंद्य इन गांवों को पंचक्रोसी गांव कहा जाता है, जो अपने स्थानीय पानी को बांस के खंभे पर लटकाते हैं। यहां वे न केवल अपने गांवों से पहाड़ तक पानी ले जाते हैं, बल्कि बहादुरी से इसे पहाड़ की चोटी पर ले जाते हैं, जहां वे इसे भगवान शिव पर अर्पित करते हैं। इस तरह पर्वत के ऊपर जल ले जाने की यह परम्परा ब्रह्मपुराण में मौजूद गंगा नदी के धरती पर अवतरण की कहानी को उलट देते हैं। गंगा नदी के अवतरण की इस कहानी के ब्रह्मपुराण के संस्करण में नदी पहले स्वर्ग से ब्रह्मांडीय पर्वत की चोटी पर अवतरित होती है और वहाँ से शिव के सिर तक बहती है। शिंगनापुर तीर्थयात्री ब्रह्मांडीय पर्वत की छवि को उलट देते हैं जिससे पानी नीचे बहने के बजाय पहाड़ पर चढ़ जाता है। विभिन्न नदियों के जल को पर्वत की चोटी पर लाकर, तीर्थयात्री गंगा के सिर पर शिव की छवि को फिर से बनाते हैं। इस संदर्भ में यह पर्वत शिव के रूप को दर्शाता है और कांवड़ों में मौजूद पानी गंगा का प्रतिनिधित्व करता है। अपने कांवड़ों में घर से पानी लेकर तीर्थयात्री शारीरिक रूप से अपनी स्थानीय नदियों को शिव के सिर के शीर्ष तक पहुँचाते हैं। तो यह स्पष्ट है कि कांवड़ को शिंगनापुर तक ले जाने वाले पुरुष परोक्ष रूप से नदियों को पर्वत की चोटी पर ला रहे हैं। इस प्रकार वे अपने सिर पर गंगा के साथ शिव की छवि को फिर से बनाते हैं। इस तरह यह इस यात्रा का एक और अर्थ हो सकता है।

एक तीर्थयात्रा का चित्रण कैसे किया जाता है जिसका अस्तित्व कम समय का है लेकिन वो एक गहरे अर्थ को समाहित किये हुए हो? तीर्थयात्रा अक्सर एक केंद्र की ओर एक स्थिर जुलूस की एक छवि को जोड़ती है लेकिन इसके विपरीत वास्तविकता तीर्थयात्रियों की आबादी को स्थानांतरित करने वाले एक स्पंदित, अशांत, प्रवाह के समान है जो फिर भी एक अलग चरित्र और इतिहास को बरकरार रखता है। कांवड़ तीर्थयात्रा जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के लाखों लोगों का एक ऐसा चलता फिरता उत्सव है जो निश्चित क्षणों में एक साथ आता है, जिसका एक उद्देश्य गंगा नदी के पवित्र जल को अपने दूर के मंदिर में निवास करने वाले महान भगवान शिव तक ले जाना है। दिल्ली, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान आदि राज्यों के ग्रामीण और शहरी दोनों हिस्सों से ज्यादातर गरीब या निम्न–मध्यम वर्ग पृष्ठभूमि के युवा वयस्क तीर्थयात्री लगभग 100–150 किलोमीटर की दूरी अधिकांशतः नंगे पैर तय करते हैं और इस दौरान वो कठोर अभ्यास और पवित्रता के सख्त नियमों का पालन करते हैं। कुछ बिना रुके पूरे रास्ते दौड़ते हैं, जबकि अन्य तीर्थयात्री रास्ते में हर इंच खुद को दंडवत करके मंदिर तक पहुंचते हैं। यह तीर्थयात्रा लाखों आम लोगों के लिए बहुत महत्व का एक लोकप्रिय धार्मिक आयोजन है, एक ऐसा तथ्य जो अपने आप में गंभीर ध्यान देने की मांग करता है। मैं लोकप्रिय धर्म शब्द का प्रयोग उस धार्मिक प्रथा के संदर्भ में करता हूं जो लोगों को देखती है और अक्सर इसे 'हमारी परंपरा' के रूप में वर्णित करती है, जो कि शाब्दिक या संस्थागत प्राधिकरण द्वारा आकार में आने के विपरीत है। हालांकि लोकप्रिय धर्म भारत में बहुत कम औपचारिक ध्यान आकर्षित करता है लेकिन यह चारों ओर मौजूद है। यकीनन कई सारे लोगों के लिए इसका गहरा आकर्षण रोज़मर्रा के जीवन और लोगों की चिंताओं के साथ इसके घनिष्ठ को दर्शाता है। अतः कांवड़ यात्रा की ये कहानी अतीत में समाप्त नहीं होती है बल्कि आज भी विवादों के माध्यम से जारी है। आज के समय में ये कांवड़ यात्रा व्यक्तिकेंद्रित न होकर सामुदायिक रूप ले चुकी है और इसके स्वरुप में भी काफी परिवर्तन देखा गया है।

सन्दर्भ सूची

1. Anne Feldhaus. Connected Places: Religion, Pilgrimage and Geographical Imagination in India, New York: Palgrave Macmillan, 2003.

2. Diana Eck. India's A Sacred Geograph, Newyork: Crown Publishing, 2012, 189-256.
3. Hindustan Times, Dak Kanwar in Progress, Pilgrim Count in Hardwar Tops One Crore, Delhi, 2011.
4. Hindustan Times, High Security at Kanwar Mela for Shivratri, Delhi, 2011.
5. Hindustan Times, Kanwar Mela Begins, Delhi, 2006.
6. Hindustan times, Kaanvad Yatra 2022: Record 38 million pilgrim arrived in Uttarakhand this year, Dehradun News, 2022.
7. James-G-Lochtefeld. God's Gateway: Identity and Meaning in a Hindu Pilgrimage Place, OÛford: OÛford University Press, 2010, 189-195.
8. Purnima S, Tripathi. The Long Walk for Worship, Frontline,2004:21:(17).
9. Ruma Bose, Walking with pilgrims: The Kanwar Pilgrimage of Bihar, Jharkhand and The Terai of Nepal, London: Routledge, 2020, 13.
10. The Hindu, The Legend of Bateshwar, 2018.